जनसत्ता

चीन का दोहरापन

पुलवामा में गुरुवार को हुए अब तक के सबसे बड़े आतंकी हमले ने भारत को तो हिलाया ही है, दुनिया के कई देश भी इस हमले से सकते में हैं। अब यह किसी से छिपा नहीं रह गया है कि इस हमले के पीछे पाकिस्तान है, भले पाकिस्तान सरकार इसका खंडन कर रही हो। पुलवामा के इस हमले की जिम्मेदारी जैश-ए-मोहम्मद ने ली है और जैश का सरगना मौलाना मसूद अजहर पाकिस्तान में ही रहता है। इस आतंकी संगठन का संचालन परदे के पीछे से पाकिस्तान सरकार और आइएसआइ ही करती है। दुनिया के ज्यादातर देश पाकिस्तान को आतंकवादी देश घोषित कर चुके हैं। यह सब जानते-बूझते भी चीन पाकिस्तान के साथ खड़ा है और उसकी आतंकवादी नीतियों और गतिविधियों को खुल कर समर्थन दे रहा है। संकट की इस घड़ी में भारत को एक बड़ा झटका यह लगा है कि चीन ने एक बार फिर मसूद अजहर को संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंतरराष्ट्रीय आतंकवादी घोषित कराने से साफ इंकार कर दिया है। हैरान करने वाली बात यह है कि एक तरफ तो चीन भारत के साथ दोस्ती का दम भरता है और दूसरी ओर भारत के कट्टर दुश्मन मसूद अजहर को वह आतंकवादी मानने को तैयार नहीं है। हालांकि पुलवामा हमले की चीन ने निंदा की है, लेकिन यह उसका ढोंग भर है।

भले चीन वैश्विक मंचों से कहता रहे कि वह आतंकवाद के खिलाफ और भारत के साथ है, लेकिन हकीकत कुछ और ही है। मसूद अजहर के बचाव में चीन का उतरना कोई नई बात नहीं है। जब-जब सुरक्षा परिषद में मसूद अजहर का मामला गया, परिषद के सदस्य देश भारत के साथ खड़े नजर आए और इस पक्ष में रहे कि मसूद अजहर को अंतरराष्ट्रीय आतंकवादी घोषित किया जाना चाहिए। लेकिन ऐन वक्त पर चीन ने ऐसे अड़ंगे लगाए कि भारत के प्रयास विफल होते गए। सबसे पहले अप्रैल, 2016 में चीन ने सुरक्षा परिषद की प्रतिबंधित आतंकियों की सूची में मसूद अजहर का नाम डालने की भारत की कोशिश को तकनीकी आधार पर रुकवा दिया था। फिर उसी साल अक्तूबर में मसूद को अंतरराष्ट्रीय आतंकवादी घोषित करने की भारत की अपील पर बाधा पैदा की। तीसरी बार फरवरी, 2017 में मसूद अजहर पर पाबंदी के अमेरिका के प्रयास को वीटो कर दिया। जाहिर है, उसके ये सारे प्रयास भारत विरोधी हैं।

भारत लंबे समय से इस कोशिश में लगा है कि मसूद अजहर को अंतरराष्ट्रीय आतंकवादी घोषित किया जाए ताकि इसके जरिए उस पर शिकंजा कसा जा सके और उसके भारत प्रत्यर्पण के लिए पाकिस्तान पर दबाव बनाया जा सके। मसूद अजहर ने 2001 में भारत की संसद पर हमले को अंजाम दिया था, उसके बाद पठानकोट और उड़ी हमले की साजिश भी उसी ने रची और उसके संगठन जैश ने ही इन हमलों को अंजाम दिया। वह पाक अधिकृत कश्मीर की राजधानी मुजफ्फराबाद सहित पाकिस्तान के शहरों में भारत के खिलाफ रैलियां निकालता रहा है और जहर उगलता रहा है। यह वही अजहर मसूद है, जिसे 1994 में श्रीनगर में गिरफ्तार किया गया था और 1999 में कंधार अपहरण कांड के बाद विमान यात्रियों की सुरक्षित रिहाई के बदले उसे भारत सरकार ने छोड़ा था। यह सब जानते हुए भी चीन अगर मसूद अजहर के साथ खड़ा है और उसे बचा रहा है तो ऐसे में भारत के साथ उसकी दोस्ती संदेह के घेरे में आ जाती है।

अवरुद्ध सूचनाएं

सूचना का अधिकार कानून बना था तो उम्मीद जगी थी कि इससे भ्रष्टाचार पर रोक लगेगी, सरकारी कर्मचारियों की जवाबदेही सुनिश्चित होगी, वे अपने कर्तव्यों के प्रति सावधान होंगे। शुरू में कुछ सालों तक ऐसा देखा भी गया। मगर अब उस कानून का असर खत्म-सा हो गया लगता है। इसकी एक वजह यह भी है कि केंद्र और राज्यों में सूचना आयुक्तों के पद समय से भरे नहीं जाते। कई जगह इन पदों को भरने में जानबूझ कर लापरवाही बरती जाती है। इसी के मद्देनजर एक याचिका पर सुनवाई करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार से पूछा है कि सूचना आयुक्तों की नियुक्ति में इतनी देर क्यों होती है? क्यों इस पद पर सिर्फ नौकरशाहों की नियुक्ति की जाती है, इसके लिए दूसरे क्षेत्रों के लोगों को क्यों नहीं चुना जाता! अदालत ने सुझाव दिया है कि सूचना आयुक्तों की नियुक्ति निर्वाचन आयुक्त की तरह होनी चाहिए। किसी सूचना आयुक्त के अवकाश ग्रहण करने से दो महीने पहले ही उसकी जगह दूसरे व्यक्ति को तैनात करने की प्रक्रिया पूरी हो जानी चाहिए। इसके लिए खोज समिति को तत्पर रहना चाहिए।

हालत यह है कि केंद्र में मुख्य सूचना आयुक्त सहित ग्यारह सूचना आयुक्त होने चाहिए, पर कई सालों से यह संख्या पूरी नहीं हो पाती। यही स्थिति राज्यों में है। अवकाश प्राप्त सूचना आयुक्त की जगह नई नियुक्ति की प्रक्रिया लंबे समय तक रुकी रहती है। इसका नतीजा यह हुआ है कि करीब साढ़े तेईस हजार शिकायतें निपटारे का इंतजार कर रही हैं। सूचना आयुक्त का काम सूचनाधिकार संबंधी शिकायतों का निपटारा करना होता है। यों इस कानून के तहत देश का कोई भी नागरिक किसी भी कामकाज से जुड़ी कोई जानकारी मांग सकता है और उसे उपलब्ध कराना संबंधित विभाग की जिम्मेदारी है। अगर वह मांगी गई सूचना उपलब्ध कराने में किसी प्रकार की टाल-मटोल करता है, तो उसके खिलाफ दंड के प्रावधान हैं। जब यह कानून बना था तो शुरुआती दिनों में इसके चलते अनेक बड़े खुलासे हुए। इससे सरकारी कर्मचारियों में अपने कामकाज के प्रति कुछ मुस्तैदी भी देखी गई, पर उनमें हमेशा इस कानून का भय बना रहता था, इसलिए जल्दी ही सूचनाएं उपलब्ध कराने को लेकर वे कोई न कोई गली निकालने लगे। सरकारें भी इस कानून के चलते असहज देखी गईं। जो लोग भ्रष्ट तरीकों से अपना काम कराते थे, उनके हाथ बंध गए। यही वजह है कि कई राज्यों में सूचनाधिकार कार्यकर्ताओं पर जानलेवा हमले भी हुए।

इस तरह सूचना आयुक्तों की नियुक्ति में जानबूझ कर की जाने वाली देरी की कुछ वजहें समझना मुश्किल नहीं है। यह अकारण नहीं है कि पिछले साढ़े चार-पांच सालों में सूचनाधिकार के तहत मांगी और प्राप्त की जाने वाली सूचनाओं की दर काफी कम हो गई है। अब तो कई बार स्थिति यह भी देखी जाती है कि इस कानून के तहत मांगी गई जानकारी को संबंधित विभाग यह कह कर ठुकरा देते हैं कि गोपनीयता के चलते वह जानकारी सार्वजनिक नहीं की जा सकती। या वे लंबे समय तक उस आवेदन को रोक कर रखते हैं, जबकि नियम के मुताबित निर्धारित समय सीमा के भीतर मांगी गई सूचना उपलब्ध कराना उनकी जिम्मेदारी है। कहना न होगा, इस तरह सूचना के अधिकार कानून को एक तरह से अप्रभावी बनाने का प्रयास होता रहा है। सर्वोच्च न्यायालय की सख्ती से उम्मीद जगी है कि यह कानून एक बार फिर से अपने प्रभावी रूप में दिखेगा।

कल्पमेधा

दिल से निकलेगी न मर कर भी वतन की उल्फत,
मेरी मिट्टी से भी खुशबू-ए-वतन आएगी।
-लाल चंद फलक

लपटों से निकलते सवाल

अभिषेक कुमार सिंह

दिल्ली, मुंबई जैसे महानगरों में पिछले एक-दो साल में जितने बड़े अग्निकांड हुए हैं उनसे यही साबित हुआ है कि चंद लापरवाहियों के चलते हम आग के आगे बेहद लाचार बन गए हैं। मर्ज आग की ताकत बढ़ जाना नहीं, बल्कि यह है कि आग से सुरक्षा के जितने उपाय जरूरी हैं, शहरीकरण की आंधी और अनियोजित विकास-नियोजन की नीतियों ने उन उपायों को हाशिये पर धकेल दिया है।

शहरों में आग की घटनाएं गंभीर समस्या बन गई हैं। तमाम लापरवाहियों और कायदे-कानून की अनदेखी ने आग को हमारे विनाश के हथियार में तब्दील कर डाला है। हाल में देश की राजधानी दिल्ली के एक होटल में आग ने सत्रह जिंदगियां लील लीं। यह बड़े अचरज की बात है कि कंक्रीट के जंगलों में तब्दील हो चुके दुनिया के तमाम आधुनिक शहर आग को न्योता दे रहे हैं। एक के बाद एक होने वाले शहरी अग्निकांडों पर कोई लगाम नहीं लग पा रही है। दिल्ली के होटल का दर्दनाक हादसा मालूम नहीं कि कितने दिनों तक हमारे जेहन में जिंदा रहेगा, क्योंकि हो सकता है कि तब तक उससे भी भीषण कोई नया अग्निकांड हमारी स्मृतियों पर हावी हो जाए। नए हों या पुराने, दुनिया भर के तमाम शहरों में आग से महफूज बनाने वाले उपायों पर तभी कुछ नजर जाती है, जब वहां की इमारतों में कोई बड़ा हादसा हो चुका होता है।

असल में, कथित विकास के नाम पर वास्तविक जंगलों से शहरों के कंक्रीट के जंगलों में पहुंची मानव सभ्यता के लिए आज आग उसकी ताकत के उलट कमजोरी साबित हो रही है। दिल्ली, मुंबई जैसे महानगरों में पिछले एक-दो साल में जितने बड़े अग्निकांड हुए हैं उनसे यही साबित हुआ है कि चंद लापरवाहियों के चलते हम आग के आगे बेहद लाचार बन गए हैं। मर्ज आग की ताकत बढ़ जाना नहीं, बल्कि यह है कि आग से सुरक्षा के जितने उपाय जरूरी हैं, शहरीकरण की आंधी और अनियोजित विकास-नियोजन की नीतियों ने उन उपायों को हाशिये पर धकेल दिया है। विडंबना यह है कि शहरीकरण के सारे कायदों को धता बताते हुए जो कथित विकास हमारे देश या बाकी दुनिया में हो रहा है और जिसके तहत रिहाइश ही नहीं, होटलों, पब, विभिन्न संस्थाओं और अस्पतालों के लिए ऊंची इमारतों के निर्माण का जो काम देश में हो रहा है, उसमें जरूरी सावधानियों की तरफ न तो शहरी प्रबंधन की नजर है और न ही उन संस्थाओं-विभागों को इसकी कोई फिक्र है जिन पर शहरों में आग से बचाव के कायदे बनाने और उन पर अमल सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी होती है।

असल में, आधुनिक वक्त के निर्माण का जो सबसे चिंताजनक पहलू इधर कुछ वर्षों में सामने आया है, वह यह है कि इमारतें बाहर से तो लकदक दिखाई देती हैं, लेकिन उनके अंदर मामूली चिंगारियों को हवा देकर भीषण अग्निकांडों में बदल देने वाली इतनी चीजें मौजूद रहती हैं कि एक बार कहीं कोई बिजली का तार भी सुलगता है तो वह भयानक हादसे का कारण बन जाता है। दिल्ली के होटल में लगी आग की शुरुआत इसके एक कमरे में ब्लोअर को शुरू करने और उसमें हुए शॉर्ट सर्किट से बताई जा रही है। ज्यादातर मामलों में आग किसी बेहद छोटे कारण से ही शुरू होती है। यह बात कई सौ साल पहले समझ में आ गई थी। पर अफसोस है कि ऐसी मामूली वजहों की असरदार रोकथाम अब तक नहीं हो सकी। जैसे, सन 1666 में लंदन की आग 'ग्रेट फायर ऑफ लंदन' के बारे में कहा जाता है कि वह लंदन की पुडिंग लेन स्थित एक छोटी बेकरी शॉप में शुरू हुई थी। इसी तरह अमेरिका के कैलिफोर्निया स्थित ऑकलैंड वेयरहाउस में एक आयोजन के दौरान लगी आग एक रेफ्रिजरेटर की देन बताई जाती है। आज की आधुनिक रसोइयों में रखे फ्रिज-माइक्रोवेव से लेकर एसी, कंप्यूटर जैसे उपकरण और फाल्स सीलिंग के भीतर की जाने वाली वायरिंग महज एक शॉर्ट सर्किट के बाद काबू नहीं किए जा सकने वाले आग के शोले पैदा कर रही है।

दिक्कत यह है कि आधुनिक शहरीकरण की जो मुहिम पूरी दुनिया में चल रही है, उसमें सावधानियों और आग से बचाव के उपायों पर ज्यादा काम नहीं किया गया है। आज इमारतें ऐसी निर्माण सामग्री से बन रही है जिसमें आग को न्योता देने वाली तमाम चीजों का इस्तेमाल होता है। आंतरिक साज-सज्जा के नाम पर फर्श और दीवारों पर लगाई जाने वाली सूखी लकड़ी, आग के प्रति बेहद संवेदनशील रसायनों से युक्त पेंट, रेफ्रिजरेटर, इनवर्टर, माइक्रोवेव, गैस का चूल्हा, चिमनी, एयर कंडीशनर, टीवी और सबसे प्रमुख पूरी इमारत की दीवारों के भीतर बिजली के तारों का संजाल है जो शॉर्ट सर्किट की सूरत में छोटी-सी

आग को बड़े हादसे में बदल डालते हैं। इन सभी चीजों को आग से बचाने के इंतजाम भी प्रायः या तो किसी इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस, जैसे एमसीबी आदि के हवाले होते हैं या फिर फायर अलार्म के सहारे जो अक्सर ऐसी सूरत में काम करते नहीं मिलते हैं क्योंकि उनकी समय-समय पर जांच नहीं होती।

दूसरा बड़ा संकट तंग रास्तों के किनारे पर ऊंची इमारतें बनाने के चलन ने पैदा किया है। ऐसी ज्यादातर इमारतों में शायद ही इसकी गंभीरता से जांच होती हो कि यदि कभी अचानक आग लग जाई तो क्या बचाव के साधन आसपास मौजूद हैं। कोई आपात स्थिति पैदा हो तो वहां निकासी का रास्ता क्या है, क्या वहां मौजूद लोगों को समय पर चेतावनी देने की प्रणाली काम कर रही है। दिल्ली के होटल में आग की घटना के पीछे ये सारे कारण गिनाए जा रहे हैं। कुछ और अहम बातें भी हैं जो शहरों में आग को विनाशकारी ताकत दे रही हैं। जैसे, तकरीबन हर बड़े शहर में बिना यह जाने ऊंची इमारतों के निर्माण की इजाजत दे दी गई है कि क्या उन शहरों के दमकल विभाग के पास जरूरत पड़ने पर उन इमारतों की छत तक पहुंचने वाली सीढ़ियां (स्काईलिफ्ट) मौजूद हैं या नहीं। दिल्ली में दमकल विभाग के पास अधिकतम चालीस मीटर ऊंची स्काईलिफ्टें हैं, पर यहां इमारतों की ऊंचाई सौ मीटर तक पहुंच चुकी है। यही हाल, इसके एनसीआर इलाके का है। नोएडा में भी अधिकतम बयालीस मीटर ऊंची स्काईलिफ्ट उपलब्ध है, पर यहां जो करीब दो हजार गगनचुंबी इमारतें हैं या जिनका निर्माण चल रहा है, उनमें से कुछ की ऊंचाई तीन सौ मीटर तक है (निर्माणाधीन टावर-सुपरनोवा 300 मीटर ऊंचा होगा)। लगभग यही हाल देश के दूसरे बड़े शहरों में है।

कहने को तो देश के किसी भी हिस्से में कोई संस्था, फैक्टरी इत्यादि अग्निशमन विभाग की तरफ से मिले अनापत्ति प्रमाणपत्र (एनओसी) के बिना नहीं चल सकती। यह एनओसी भी उन्हें सीधे नहीं मिलता। दिल्ली में अग्निशमन विभाग को जब एमसीडी, एनडीएमसी या अन्य संबंधित एजेंसियों से इसका आवदेन मिलता है, तो वे उन फैक्ट्रियों या संस्थानों की इमारतों में जाते हैं और जांच करने के बाद संतुष्ट होने पर एनओसी जारी करते हैं। लेकिन सभी जानते हैं कि इस प्रावधान की अनदेखी होती है। बताया तो यह भी जाता है कि इन विभागों के कर्मचारियों को पता भी रहता है कि किस संस्था या फैक्टरी में कौन-सा काम हो रहा है, लेकिन मिलीभगत कर सारी धांधलेबाजी की ओर से आंखें मूंद ली जाती हैं। यह भी नहीं भूलना होगा कि फैक्ट्रियों, होटलों, अस्पताओं आदि को समय-समय पर अग्निशमन विभाग की ओर से फायर सेफ्टी नोटिस तो जारी किए जाते रहे हैं, लेकिन राजनीतिक दखलंदाजी और कर्मचारियों-अधिकारियों की साठगांठ से मामला अक्सर ही ठंडे बस्ते में डाल दिया जाता है। वक्त आ गया है कि देश तय करे कि वह विकास की चमचमाती मीनारें खड़ी करने से पहले यह सुनिश्चित करेगा कि भविष्य में कोई शहरी इलाका या इमारत लापरवाही और नियमों की अनदेखी की वजह से पैदा होने वाली मानवनिर्मित आपदा यानी आग में नहीं घिरेगी और इस कारण बेकसूर लोगों की जान नहीं जाएगी।

मन हुनरमंद है

पूनम पांडे

दुनिया मेरे आगे

कई बार ऐसा भी होता है कि किसी शोर या कोलाहल की जरूरत नहीं होती। बस, पूरी दिनचर्या किसी मौन वार्तालाप में बहुत ही खूबसूरती से गुजर जाती है। हमसे बोले बगैर ही उड़ती तितली या हवा की महक, धूप की तेजी, सांझ का रंग- सब कितना कुछ प्यारा-प्यारा बतिया कर चले जाते हैं। मन की अपनी रूमानियत ही अलग है।

मन की एक खास प्रकृति, खास संरचना होती है। उसे हर समय शोर, कोलाहल, चीखना-चिल्लाना नहीं सुहाता। मन इन सबसे थक जाता है तो रोगी हो जाता है। उसके बाद मन को खामोशी, एकांत और हरियाली प्रफुल्लित कर देते हैं। हवा के अलमस्त झोके के साथ आया कोई फूल हमें किसी फिल्म को देखने की खुशी से भी ज्यादा खुश कर जाता है।

मन को इन्हीं से तो प्यार होता है। दूर आसमान में फैले नीले सुकून में मन सांस लेता है और ऐसा सुख प्राप्त कर लेता है जो दिव्य है। मन की सेहत एक जरूरी आदत होनी चाहिए, वैसे ही जैसे भूख लगने पर पेट की आग शांत करना। मन को रसमय रखना बहुत बड़ी बात है। संसार की चकाचौंध और भागमभाग के बीच मन की हर धड़कन को बोझिल होने से बचाए रखना है। हो सकता है कि संसार में बुनियादी जरूरत सबकी अलग-अलग हों, लेकिन मन को नियंत्रित रखना तो फिर भी संभव है ना।

यहां पर आत्मानुशासन बहुत सहायक सिद्ध होता है। इस अनुशासन में मन को इतना समझदार होना ही चाहिए कि यह असली सौंदर्य बोध है क्या? महान साहित्यकार जार्ज बर्नार्ड शा साहित्य के साथ सौंदर्य-प्रेमी भी थे। उनका अधिकांश समय इन दोनों के अध्ययन में ही गुजरता था। एक बार उनका एक प्रशंसक उनसे मिलने आया। उस समय बर्नार्ड शा सौंदर्य का ही चिंतन कर रहे थे। प्रशंसक ने उनसे सवाल किया- हद है, आप सुंदरता के उपासक हैं, मगर आपके सामने रखी मेज पर गुलाब का फूल तक नहीं रखा है? यह सुन कर बर्नार्ड शा ने कहा- मुझे आपका सर बहुत पसंद आया, बहुत खूबसूरत है, अब क्या इसको काट कर मेज पर सजा लूं?

बर्नार्ड शा की बात सटीक थी। प्रशंसक शर्म से पानी-पानी हो गया।

मशहूर रूसी-अमेरिकी उपन्यासकार, दर्शन शास्त्री और सिने पटकथा लेखक आयन रैंड का एक प्रसिद्ध कथन है कि 'पावन आत्मा पर कभी शासन नहीं किया जा सकता।' क्या हम इससे यह आशय लें कि सरल और पवित्र व्यक्तित्व अपनी गुणवत्ता के चलते दुनिया में सदैव पूजे जाते रहे हैं?

लेकिन इससे भी बड़ी और गहरी बात गेटे ने कही है कि जो अपने मन की सरगम नहीं सुन सकता, वो बाहर क्या तो सुनेगा और समझेगा। किसी लेखक ने कहा है कि हमारा मन कोई आम का पेड़ तो नहीं है जिस पर हर साल रसीले फल लगते हैं और हम उसी क्षण उन्हें तृप्ति भर खा भी सकते हैं। कभी-कभी उलटा भी हो जाता है।

हम यश की कामना से मुक्त हों और असफल होने की तैयारी मन में हो तो ही काम में प्रवृत्त होना चाहिए और मगन होकर रहना चाहिए। संतुष्ट और सुकून भरा मन हर हाल में मगन रहने वाला होता है। दरअसल, मन के पास अलौकिक ताकत, अपार शक्ति भी संचित है। बस, इसे पहचानना पड़ता है। मन के लिए सब संभव है और इसका विस्तार सितारों तक है।

एक बार की बात है एक निराश और परेशान नवयुवक मनोवैज्ञानिक सलाहकार के पास आया। सलाहकार से बोला कि वह सभी की नजर में बिल्कुल निकम्मा और बेकार हो गया है, किसी काम का नहीं रहा। सलाहकार ने मुस्कुरा कर कहा कि 'अरे... नहीं। इतनी जल्दी अपने बारे में फैसला मत लो। ऐसा करो, कल सुबह मेरे पास फिर से आओ, तब तक कोई तीन बेकार, बेकाम की चीजों का पता लगा कर मुझे बताओ। उसके बाद आपकी समस्या का समाधान खोजता हूं।'

नवयुवक को सलाहकार की बातों पर हंसी आ गई। यह तो बहुत आसान काम था। नवयुवक को रास्ते मे गोबर का ढेर मिला, कुत्ता मिला, झाड़ी मिली। उसकी खोज पूरी हो गई। नवयुवक की नजर में ये सब बेकार चीजें थीं। वह अगले दिन आया और सलाहकार को बताया कि गोबर, कुत्ता और झाड़ी किसी काम के नहीं। तब सलाहकार ने मंद-मंद मुस्कुराते हुए कहा- 'मेरे दोस्त, गोबर से उपले बनते हैं, खाद बनती है, गोबर गैस बनती है। कुत्ता मानव का सबसे वफादार दोस्त है, घर की चौकीदारी करता है और झाड़ी फसल के लिए बाड़ बनाने के काम आती है, सूख गई तो ईंधन भी है।'

नवयुवक यह सुन कर भौंचक्का रह गया। अब उसने हिम्मत बटोर कर कहा- मैं भी किसी का दोस्त बन सकता हूं। बाड़ की तरह सुरक्षा दे सकता हूं। उसका आत्मविश्वास जाग गया। वह समझ गया कि मन की ऊर्जा से वह भी कुछ सार्थक कर सकता है।

आतंक का दंश

जम्मू-कश्मीर के पुलवामा जिले में गुरुवार को सीआरपीएफ के काफिले पर हमले में जवानों के मारे जाने पर राजनीति करना बेहद अफसोसनाक है। कांग्रेस के प्रवक्ता ने कहा कि उड़ी, पठानकोट, पुलवामा आतंकी हमलों की शृंखला और राष्ट्रीय सुरक्षा से समझौता जारी है मगर केंद्र सरकार चुप है। उधर विदेश राज्यमंत्री और पूर्व सेनाध्यक्ष वीके सिंह ने कहा कि सेना के जवानों के खून की एक-एक बूंद का बदला लिया जाएगा। कांग्रेस प्रवक्ता ने गिनाया कि राजग सरकार के पांच साल में यह सत्रहवां बड़ा हमला है। उसके मुताबिक आतंकी हमारी सेना के जवानों के सिर काटकर ले जाते हैं और प्रधानमंत्री चुप रहते हैं!

इसे भारतीय राजनीति में संजीदगी के अवसान का दौर कहें या फिर राजनीतिक अपरिपक्वता का नायाब नमूना कि पुलवामा के जघन्य आतंकी हमले को भी सियासी नफा-नुकसान के तराजू में तोला जा रहा है। जब बात भारत की अखंडता, अस्मिता, सांप्रदायिक सौहार्द पर मंडराते खतरे की हो तब भी नेताओं की जुबानें जले पर नमक छिड़कने का काम कर रही हैं। आतंकी हमले जैसे संवेदनशील मसले पर भी राजनीतिक दल अपना फायदा देखने की कोशिश कर रहे हैं। इन दलों को समझना होगा कि आतंकवाद का कोई मजहब व चेहरा नहीं होता है, उसे बस आतंक फैलाने और खून बहाने से मतलब होता है। ऐसे हमले के बाद एक ओर जहां देश में गुस्से और गम का माहौल है वहीं दूसरी और सियासी दल इस पर अपनी राजनीतिक रोटियां सेकने को तैयार हैं। अपने ही मुल्क के नेताओं को आतंकी हमले में अगर राजनीति की गुंजाइश और साजिश दिखाई देने लगे तो फिर संजीदगी की उम्मीद किससे की जाए!

दरअसल, सियासत का नया स्टाइल पहले सीबीआइ की कार्रवाई में सियासी साजिश देखता था तो अब आतंकी हमलों में भी देखने लगा है! जब देश बाह्य और आंतरिक खतरों से एक साथ कई मोर्चों पर जूझ रहा हो तो उस वक्त नेताओं के ऐसे बयान उनकी सोच पर सवाल खड़े करते हैं। ऐसे वक्त में आपसी मतभेद भुलाकर साथ खड़े रहने की जरूरत होती है। यही सोच एक स्वस्थ लोकतंत्र की भी पहचान है लेकिन दुर्भाग्यवश नेता अपने सियासी हित के चलते ऐसे बयान देने लगते हैं जो सीमा पार बैठे दुश्मनों के लिए खुराक का काम करते हैं।

● *अमन सिंह, प्रेमनगर, बरेली, उत्तर प्रदेश*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

कांटे से कांटा

पुलवामा के आतंकी हमले की विश्व भर में घोर निंदा हुई है। सभी देशों ने भारत के साथ सहानुभूति और एकजुटता जताई है। अब समय आ गया है जब सरकार कोई निर्णायक कदम उठा कर आतंक के इस नासूर को जड़ से साफ कर दे। कहने की आवश्यकता नहीं कि श्रीलंका ने बहुत सहा मगर आखिर आजिज आकर उसने एलटीटीई जैसे दुर्दांत आतंकी संगठन को अपनी सैन्य शक्ति से नेस्तनाबूद कर दिया। क्या हमारा देश कश्मीर के अलगाववादियों और पाकिस्तान समर्थित आतंकवादी संगठनों को ऐसा ही पाठ नहीं पढ़ा सकता? ध्यान रहे कांटा कांटे से ही निकलता है!

विडंबना है कि देश-विरोधी गतिविधियों को बढ़ावा देने वाले अलगाववादी नेताओं की सुरक्षा के लिए सीआरपीएफ के जवान ही तैनात रहते हैं। फिर भी इनमें से किसी ने पुलवामा की जघन्य आतंकी घटना की निंदा नहीं की। ये देश विरोधी बातें भी करते रहे हैं और सरकार से सुरक्षा भी पा रहे हैं! शायद ही किसी देश में ऐसा होता हो!

● *शिबन कृष्ण रैणा, अरावली विहार, अलवर*

आखिर कब

पुलवामा में सीआरपीएफ के काफिले पर जिस तरह आतंकी हमला हुआ उससे कई सवाल खड़े हो रहे हैं। इनमें अहम है कि आखिर इस काफिल्के गुजरने की सूचना आतंकी संगठन तक कैसे पहुंची? खुफिया विभाग ने जम्मू कश्मीर राष्ट्रीय राजमार्ग पर आतंकी हमले का एलर्ट जारी किया था, फिर भी इतना बड़ा हमला हो जाना बहुत दुखद है। हमले के बाद जिस तरह से आतंकी संगठन ने जिम्मेदारी ली है उसे सरकार को चुनौती के रूप में लेना चाहिए। शहीदों के खून के एक-एक कतरे का हिसाब लिया जाना चाहिए। जवानों की शहादत केवल निंदा या आश्वासन के शब्दों में उलझ कर न रह जाए। सरकार एक के बदले दस सर लाने के वादे को आखिर कब पूरा करेगी?

● *मोहम्मद आसिफ, जामिया नगर, दिल्ली*

वाजिब अवसर

पुलवामा के जघन्य हत्याकांड ने देश के अलावा समूचे विश्व को झकझोर कर रख दिया है। आतंकवाद का पर्याय पाकिस्तान बातों से तो हरगिज मानने वाला नहीं है। वह तबाही के कगार पर खड़ा है, फिर भी उसने अपने जीडीपी का बड़ा हिस्सा भारत में आतंकवाद फैलाने के लिए तय कर रखा है। समय आ गया है कि भारत पाकिस्तान की आर्थिक कमर पर प्रहार करे। भारत सरकार कड़े फैसले ले और समूचे विपक्ष को भी दलगत राजनीति से इतर सरकार के हर फैसले के साथ खड़ा हो जाना चाहिए।

भारत सरकार पाकिस्तान को 'मोस्ट फेवरेट नेशन' का दर्जा तो समाप्त कर ही चुकी है, अब उसे नदी जल बंटवारा संधि भी खत्म कर देनी चाहिए ताकि वह पानी की बूंद-बूंद के लिए मोहताज हो जाए। पाकिस्तान से व्यापारिक और राजनयिक संबंध कायम रखने का अब कोई मतलब नहीं है। कश्मीर में धारा 370 खत्म करने का भी यह वाजिब अवसर है, इसलिए लगे हाथ इसे कार्यान्वित कर ही दिया जाए। तभी आतंकवाद की कमर टूटेगी, नहीं तो हमारे जवान इसी तरह अपने प्राणों का बलिदान देते रहेंगे।

● *सतप्रकाश, रोहिणी, नई दिल्ली*

यह दायित्व

पुलवामा में दिल दहला देने वाले आत्मघाती हमले में सीआरपीएफ के 40 जवानों की मौत ने आतंकवाद और उससे निपटने की नीति पर फिर सवाल खड़ा कर दिया है। सीमा पर दुश्मन से लड़ने और देश में उपद्रवियों से संघर्ष करने की जिम्मेदारी सैनिकों की है तो राजनीतिक शक्ति का दायित्व है कि ऐसा माहौल बनाने की कोशिश करे जहां इस तरह की हिंसक परिस्थितियां पैदा होने से टाली जा सकें। जिम्मेदार और उदार लोकतांत्रिक देशों से यह उम्मीद नहीं की जाती कि उनकी नीतियां और उनके काम प्रतिशोध की भावना से प्रेरित हों। तुरंत दी गई प्रतिक्रिया शांति स्थापित होने की गारंटी नहीं देती।

● *शिवानी पटेल, कानपुर*